International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 2 Issue 2 || February 2013 || PP 75-77

'वर्तमान मे महिलाओं की भूमिका में परिवर्तन'

डा0 शान्ती स्वरूप
वरिष्ठ प्रवक्ता
समाजशास्त्र विभाग
एस.एम.कॉलेज चन्दौसी, सम्भल

यद्यपि यह सत्य है कि स्त्रियों का स्थान लगभग सभी समाजों में एक समस्या है और मानव विकास में आज यह एक मूलभूत संकट के रूप में प्रस्तुत है, परन्तु हमने यह महसूस किया कि स्त्री–पुरूष की असमानाता को भारतीय समाज की विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असामानताओं से अलग नही किया जा सकता। जाति, समूदाय और वर्ग पर आधारित हमारे परम्परागत सामाजिक ढॉचे में नीहित असामानताएँ विभिन्न क्षेत्रों में स्त्रियों की स्थिति पर विशेष रूप से प्रभाव डालती है।

बहुत समय से समाज स्त्रियों को हीन दृष्टि से देखता रहा है और इसी कारण आज तक महिलाओं को वह सभी मानव अधिकार प्राप्त नहीं हो सके है, जो पुरूष को सहज सुलभ है। स्त्रियों के प्रति समाज के इस भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण के फलस्वरूप ही महिलायें समाज में अपना यथोचित योगदान पाने में असमर्थ रहीं हैं। उसका परिणाम यह हुआ कि समस्त मानव समाज को इसके दुष्परिणाम भोगने पड़ रहें हैं। अभी तक महिलाओं का समान अधिकार प्रदान करने तथा समाज में उनके यथोचित योगदान से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान नही हो सका है, जिसके फलस्वरूप समाज महिलाओं की प्रतिभा से लाभान्वित होने से अभी तक सक्षम नही हो पाया है।

राज्य–व्यवस्था में पुरूषों और स्त्रियों के कार्यक्षेत्रों में और पुरूष प्रधान एवं स्त्री प्रधान कार्यो में उग्र भेद की बात को अन्तर्निहित भाव से स्वीकार करता है। संविधान में स्त्री और पुरूष जाति को जो समानता दी गई है, वह सच्चे अर्थो मे तभी संभव होगी जब लोगों की धारणाये और अभिवृत्तियां उसके अनूरूप ढाल दी जाएँ।

हमारे देश में पुरूष प्रधान और स्त्री प्रधान कार्य क्षेत्रों और भूमिकाओं पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि जो कार्य स्त्रियों के लिए उचित समझे जाते हैं और जिनकी उनसे उपेक्षा की जाती है उनकी सूची सारे भारत में एक समान नही है।

परिपाटी के अनुसार, बिरादरी के लिए निर्णायक कार्यो में भाग लेना और राजनैतिक शक्ति का प्रयोग करना अनन्य रूप से पुरूष के कार्य क्षेत्र में आते हैं। परम्परागत पंचायतो के गठन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भले ही ये पंचायते गॉव की हो या जाति समूहो की ,इनके सभी सदस्य केवल पुरूष ही होते है।

सामान्यतः अपने घर के सारे काम स्त्रियों को ही करने पड़ते है, क्योंकि पुरूषों के लिए यह प्रतिष्ठाजनक नही समझा जाता है। वे इन्हें विशेष परिस्थतियों में कर सकते है जब स्त्रियां किसी बीमारी आदि से ग्रस्त हो। क्षेत्रीय कार्यकलाप भी इसी बात की ओर संकेत करते हैं कि स्त्रियों से जिस काम की अपेक्षा की जाती है उसके प्रकार और मात्रा के बारे में कही कोई एकरूपता नही है। एक समाज अथवा प्रदेश के जो काम स्त्री करती है, उसी काम के अन्यत्र प्रायः स्त्रियों द्वारा न किये जाने योग्य करार दिया जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में बुनाई के काम पर स्त्रियों का एकाधिकार है, जबकि हिमाचल प्रदेश के मैदानों में इसी को पुरूषों का काम समझा जाता है।[1]

मध्यम वर्ग में जो एक गठहिन वर्ग है, स्त्रियों और पुरूषों के क्षेत्र स्पष्ट रूप से बटे हूए हैं। साधारणता स्त्रियां जो काम करती है उसे समग्र रूप मे स्त्री भूमिका की तरह देखा जाता है। इस बात को नही भुलाया जा सकता है कि काम उन लोगों के द्वारा किया जा रहा है जिनका परिवार के प्रसंग में अपना निशचित अस्तित्व है। यानि माता, पत्नी तथा बहन आदि के रूप में चूकि स्त्रियां अधिकांशतः घरेलू क्षेत्र सीमित रहती है, इसलिये उनका काम पूर्णतया अलग खण्डों में आता है।

सम्पन्न लोगों में भी पुरूष और स्त्रियों के कार्यक्षेत्र सुनिश्चित और अलग–अलग पाये जाते हैं। घरेलू सहायता के कारण उबा देने वाले कार्यो का बोझ स्त्रियों पर नही पड़ता, परन्तु फिर भी घर चलाने और बच्चों का पालन पोषण करने की उनसे अपेक्षा की जाती है पुरूषों और स्त्रियों के क्षेत्रों में विशिष्ट व्यवहार से संभावना और सामाजीकरण की प्रक्रिया के विचारों लड़कियों को शिक्षा और प्रशिक्षण के लिए प्रदान किय गये अवसरों से उनके सामने रखे गये आदर्शो से जीवन से सम्बन्धित अपेक्षायें होती है, और उनसे जिस प्रकार से हुए अपने जीवन पद्वति का सीधा सम्बन्ध है।

अधिकांश पुरूष अपने पुत्र के लिए स्कूल के चुनाव, शिक्षा और व्यवसाय के प्रकार के बारे में अपने निर्णय का इस्तेमाल करते है। जैसे कि संभावना की जाती है ग्राम और नगरीय क्षेत्रों और समुदायों के विभेदित समाजशास्त्रीय और नृविज्ञानी अध्ययन स्पष्टतः पुरूषों और स्त्रियों के कार्यक्षत्रों की ओर संकेत करते है। अधिकांशतः सर्वेक्षणो में पाया गया कि 80 प्रतिशत स्त्रियां पूर्णतया घर गृहस्थी का काम करती है। वे पैसे खुद खर्च नही करती है। 369विवाहित छात्राओं द्वारा दिये उत्तरों पर आधारित देसाई के निष्कर्षो से पता चलता है कि अधिकांश पुरूष घर के काम–काज में भाग नही लेते है। कॉलेजो के विधार्थियों का अध्ययन करने से लडके और लड़कियों के दैनिक कार्यो लड़कियों पर लगे प्रतिबन्धों और लड़कों के अपेक्षया स्वछन्द विचरण में और ब्राहा जगत के साथ उनके सम्पर्क रखने और यात्रा करने में पायी जाने वाली तीव्र विषमताओं का पता चलता है।

व्यस्क भूमिकाओं के लिए तैयार होने की प्रक्रिया में क्षेत्र सुस्पष्ट है। प्रबुद्व वर्ग में भले ही इस भेद पर जोर न दिया जाए, परन्तु यहां भी स्त्रियोचित कामों और उनकी योग्यताओं को अलग माना जाता है। लड़की समाज के जिस स्तर पर पलती है, उस समाज की कल्पनाओं के अनुसार उसे स्त्रीमूलक कार्यो के लिए तैयार होना पड़ता है।

मध्यमवर्गीय परिवारों में लड़के की शिक्षा को अधिक महत्व दिया जाता है, क्योंकि काम पाने के लिए उसका शिक्षित होना अनिवार्य है। लड़कों की शिक्षा के लिए माता–पिता हर किस्म के बलिदान के तैयार रहते है। आधुनिक युग की सभी दुःशंकाओ के बावजूद वे आशा करते है कि उनके प्रयास उन्हें बुढ़ापे में आराम देगें। अनेक समाजशास्त्रीय अध्ययनों से यह पता चला है कि यदि परिवार के पास पर्याप्त साधन हो तो लड़की के अधिक प्रतिभाशाली हाने पर भी उसके भाई को उच्च शिक्षा के लिए भेजा जाता है। वस्तुतः इसके पीछे भी संस्कृति के सांचे में ढका कठोर दृष्टिकोण है जिसका व्यक्तिगत रूप से उल्लेख नही किया जाता। रूढिवादी माता–पिता इस विचार को त्याग नही सकते कि अपने पालन पोषण के लिए वे अपनी पुत्री पर निर्भर नही रह सकते और न ही उन्हे रहना चाहिए।

सामाजिक संदर्भ में, हमारे समाज में शारीरिक श्रम को दर्जा दिये जाने और घर में रहने वाली स्त्रियों के नाम से जुड़े सांस्कृतिक मूल्य के कारण मजदूरों, अकुशल फैक्ट्री कामगारों और भृत्यों के रूप में काम करने वाली ग्रामीण और नगरीय स्त्रियों का काम उनकी अच्छी प्रतिष्ठाजनक स्थिति नही बनाता। भारत का सामाजिक संस्कृतिक परिवेश गत पॉच दशकों में विशेष रूप से भारत के स्वतन्त्र होने के बाद 25 वर्षो में बहुत शीघ्रता से बदला है, आधुनिकीकरण की शक्तियों का प्रबल प्रभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है और समाज को लोगों की नई आवश्यकताओं और अन्तःप्रेरणाओं के प्रति संवेदनशील होना होगा। महात्मा गांधी और अन्य नेताओं ने समाज सुधारकों और राजनैतिक नेताओं दोनो की भूमिका अदा करते हूए एक नए समाज की कल्पना की, जिसमें दीन और पीड़ित लोगों के लिए नई व्यवस्था और स्त्रियों के लिए मुक्ति की व्यवस्था की। यह ठीक है कि उनका दर्शन और कार्य स्त्रियों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोणों में कोई तात्कालिक परिर्वतन न ला सका, लेकिन फिर भी उसका प्रबल प्रभाव पड़ा। और आगामी दशकों में स्त्रियों के लिए जिन नई भूमिकाओ की कल्पना की गई थी उन्हें वैध बना दिया गया। सामाजिक वातावरण में स्पष्ट परिवर्तन के लिए आज अनेक प्रकार की प्रबल शक्तियां काम कर रही है। शिक्षा का, उसकी कमियों के बावजूद निश्चित प्रभाव पड़ा है। इसमें एक ऐसा कार्यक्षेत्र खोल दिया जिसमें स्त्रियां स्वछन्दता पूर्वक पुरूषों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकती और अपनी योग्यता सिद्व कर सकती । इससे रोजगार के प्रतियोगी क्षेत्रों में स्त्रियों के लिए भी मार्ग खुले हैं। जनसम्पर्क साध्नों ने विशेषतया फिल्मों और रेडियों ने अपने दोषपूर्ण सम्प्रत्यीकरण और संकुचित पहुच के बावजूद सामाजिक प्रतिबिम्बों और लक्ष्यों को दोबारा नियत करने में अपना योगदान दिया है। लेकिन इस परिवर्तन को सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रोत्साहन जनांकिकिय दबावों और आर्थिक बाध्यताओं से मिला है। इन्ही के कारण स्त्रियों को आर्थिक अवसरों की नई रूपरेखा का लाभ उठाने में सहायता मिला है । राजनीतिक और नई विचारधाराओं के विस्तार को बदलते आर्थिक प्रसंग में भूमिकाओं की वैधता अधिकाधिक सामाजिक वातावरण का रूप धारण करती चली जा रही है। कम से कम प्रकट स्तर पर स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है यद्यपि प्रछन्न स्तर पर आधारभूत दृष्टिकोण में इतना परिवर्तन नही हुआ है जो कि व्यक्त परिवर्तनों के अनुरूप हो। इस प्रकार हमें पता चलता है कि स्त्रियों की भूमिका में काफी विस्तार हुआ है। अपनी पारम्परिक भूमिकओं के अलावा उन्हें कई नई भूमिकाओं में भी भाग लेने का कहा जा रहा है। यह बात विशेषतयो निम्न श्रेणी के उच्च स्तर पर और सम्पूर्ण समाज के उस मध्यम स्तर पर पूरी तरह खरी उतरती है जिसमें शिक्षा को सामाजिक प्रतिष्ठा का चिन्ह और आर्थिक लाभ का साधन समझा जाने लगा है।

स्त्रियों को मुख्यतः घरेलू भूमिकाओं के विषय में पारम्परिक प्रतिमानों के बने रहने और वृहत्तर समाज में नई कार्य भूमिकाओं की वृद्वि ने उनके लिए समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ पैदा कर दी है। इससे उनका कार्यभार बढ़ा है। दैनिक घरेलू कामकाज के साथ–साथ पूर्णकालिक नौकरी ने उनके लिए काम का बोझ बढ़ा दिया है कि वक इसे बासानी से संभाल नहीं सकती। घरेलू मोर्चे पर उन्हें कोई सहायता नही मिलती और न ही इस क्षेत्र में वे अपने दायित्वों की उपेक्षा कर सकती है।[2]

पिछले कई वर्षो से स्त्रियों ने प्रशासनिक नौकरियों में भी अच्छा काम कर दिखाया है। लेकिन इस क्षेत्र की कठिनाइयां कुछ भिन्न प्रकार की हैं। पुरूष स्त्रियों को अधिक से अधिक अपने बराबर मानने के लिए तैयार है,लेकिन अब भी पुरूष किसी स्त्री अधिकारी के नीचे काम करना पंसद नही करते। स्त्रियों की सीमाओं और उनके उचित स्थान की परम्परागत धारणा उत्तर प्रदेश में घटी उस सुज्ञात घटना के लिए उत्तरदायी है जिसमें मुख्यमंत्री श्री चरण सिंह ने कहा कि स्त्री अधिकारियों को प्रशासनिक दायित्व का कोई काम न दिया जाए। उनका विचार था कि स्त्रियां प्रशासनिक कार्यो के योग्य नहीं होती। समाचार पत्रों का कथन था कि मुख्यमंत्री के मत के अनुसार स्त्रियां इतनी नाजुक होती है कि उन्हें कोई अधिशासी कार्य नहीं सौपा जा सकता। उन्होंने स्त्रियों अधिकारियों के प्रतिनिधि

मंडल से भी मिलने से इंकार कर दिया जो इस विषय में अपना विरोध प्रकट करना चाहती थी। इससे पहले व 'महिला योजना' को समाप्त कर चुके थे। समाचार पत्रों की सूचना के अनुसार उन्होंने स्त्रियों से अनुरोध किया कि उन्हें फिर से रसोई में लौट जाना चाहिए और बच्चों की देखभाल करनी चाहिए।[3]

यह मामला अतिविवादपूर्ण मामला हो सकता है, लेकिन यह एक विशेष विचारधारा की ओर संकेत अवश्य करता है। ऐसे बहुत से लोग एक हैं जो इस मत के हैं सार्वजनिक रूप से प्रगतिवादी होने का दम भरते है।[4] किन्तु उच्च पदों पर आसीन स्त्रियों की मूर्खता और असफलताओं की कहानियां सुनाते हैं, यह विचार कि उच्च अधिशासी पदों पर काम करने के लिए स्त्रियों में एक अधिकारी के अनिवार्य गुण नही होते, केवल पुरूष युयत्सा या रूढ़िवादी दृष्टिकोण पर आधारित नहीं है। कुछ स्त्रियां इसे म नही मन स्वीकार करती है। उदाहरण के लिए एक लोकप्रिय लेखिका शिवानी ने भारतीय प्रशासन सेवा की एक कल्पित स्त्री अधिकारी को इस तरह चित्रित किया है, जिसमे स्त्रियों की कमजोरी उभर

कर सामने आयी है। इस विषय पर उनकी उपन्यासिका एक लोकप्रिय साप्ताहिक पत्रिका में धारावाहिक के रूप में छपी थी जिसे बाद में पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया। यह पुस्तक सामान्य पाठकों के मन में स्पष्ट और अमिट छाप छोड़ती है कि स्त्रियां उच्च प्राधिकार के पदो के अनुरूप कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है।

स्त्रियों की दोहरी भूमिका से सम्बन्धित समस्याओं में कार्यभार परिवार के भीतर अन्तरवैयक्तिक सम्बन्ध और भूमिका संघर्ष गिने जा सकते है। पत्नियों की लाभप्रद नौकरी को पुरूष किसी हद तक उभय भाव से देखते है। पत्नियों की नौकरी को इसलिए स्वीकार किया जाता है क्योंकि इससे आर्थिक बोझ में कमी होती है और इससे जीवन स्तर ऊँचा होता है। लेकिन घर गृहस्थी के परिचालन में यह विघटन का कारण भी हो सकती है। इसका दूसरा पहलू स्त्रियों की आर्थिक स्वतन्त्रता हैं, जिसे बहुत से पति पंसद नही करते। कितनी स्त्रियां अपनी कमाई के उपयोग के सम्बन्ध में स्वयं निर्णय ले सकने की स्थिति में होती हैं यह कहना कठिन है कि एक अध्ययन के अनुसार ब्रहा कार्य में नीहित मिलने–जुलने की और विचरण की स्वतन्त्रता को अनेक घरों में अच्छा नहीं समझा जाता और काम करने वाली स्त्रियों के लिए इसे एक लांछन माना जाता है।[5]

दोहरी भूमिका अदा करने का अधिकार स्त्रियों को मिलना चाहिए समाज के स्थायीकरण में माता के रूप महत्वपूर्ण योगदान करने के लिए स्त्री को दण्ड नही मिलना चाहिए। बच्चा को पैदा करने की बात को स्त्रियों का काम माना जाता है, इसलिए यह दृष्टिकोण सामने आता है कि स्त्री या तो अपना काम छोड़ दे या बच्चा पैदा करने का अपना अधिकार। घर के कामों के विषय में पुरूष और स्त्री के काम के भेद को मिटाना होगा। यदि उन कामों की समाज प्रतिष्ठा का दर्जा दे जिन्हें स्त्री के कामों की संज्ञा दी जाती है, तो पुरूष उन कामों को करने से हिचकिचाना छोड़ देंगें। बच्चों की सामाजीकरण की प्रकिया में घर और स्कूल दोनों जगह इस दृष्टिकोण को ढ़ालना होगा।

स्त्रियों को अपने दोनों काम दक्षतापूर्वक और संतोषजनक ढंग से करने का अवसर प्रदान करने के लिए पर्याप्त व्यवस्था करना आवश्यक है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शिशु गृहों, बाल वाटिकाओं और श्रम सेवी साधनों की व्यवस्था करना जरूरी है। सभी परिवारों में उपकरण खरीदने को सामर्थ्य नहीं होती, इसलिए कपड़े धोने साग–सब्जी काटने और अन्य ऐसे उपकरणों की व्यवस्था करनी होगी, जो इन कामों की नीरसता से मुक्ति दिला सके।[6]

संदर्भ ग्रंथ

1. परमार बी.एस.हिमालय में बहुपति प्रथा, पॉलिएंड्री इन दी हिमालयाज, 1975
2. 1967 में महाराष्ट्र में सविचालय के एक क्लर्क ने एक महिला अधिकारी पर हिंसात्मक प्रहार किया, क्योंकि वह महिला अधिकारी के अधीन कार्य करना सहन नही कर सकता था। '' कंटेन्ट अनालिसिस ऑफ पीरियाडिकल्स इन मराठी, जिसे सुधा गोगरे ने समिति के लिए तैयार किया।''
3. टाइम्स ऑफ इंडिया, 19 जुलाई 1970, पेट्रियंट, 18 जुलाई 1970
4. एस. सी. दुबे आई. सी. एस. आर.–आई. आई. ए. एस. सर्वेक्षण की टिप्पणियों से
5. आइलीन रॉसः 1961, हिन्दु फैमिली इन ऐन अर्बन सैटरिंग
6. भारत में महिलाओं की स्थिति के अध्ययन के सम्बन्ध में दृष्टिकोण अध्ययन दल की रिपोर्ट, 1975,